[2021] 7 एस. सी. आर. 768

जयपुर जिला दुग्ध उत्पादक
सहकारी संघ लिमिटेड एवं अन्य
बनाम
मैसर्स अजय सेल्स एंड सप्लायर्स
(विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 13520 2021)

09-सितम्बर-2021

[एम. आर. शाह, अनिरुद्ध बोस, जे.जे.]

मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 - धारा 11 और धारा 12 आर/डब्ल्यू की उप-धारा (5) सातवीं अनुसूची - मध्यस्थ की नियुक्ति - 31.03.2015 को, उत्तरवादी और याचिकाकर्ता-सहकारी संघ ने दूध और मक्खन के वितरण के लिए एक वितरक समझौता किया - पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न हुआ - वितरण करार के खंड 13 में एक मध्यस्थता खंड शामिल था, जिसमें प्रावधान था कि सभी विवाद और मतभेद किसी भी तरह से करार से उत्पन्न होते हैं या किसी भी तरह से छूते हैं या उससे संबंधित हैं। याचिकाकर्ता संघ के अध्यक्ष को एकल मध्यस्थ के पास भेजा जाएगा - उत्तरवादी ने करार के खंड 13 के अनुसार एकल मध्यस्थ-अध्यक्ष से संपर्क किया - मध्यस्थता कार्यवाही के लंबित रहने के दौरान, उत्तरवादी ने अधिनियम की धारा 11 के तहत मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया - उच्च न्यायालय ने मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए पूर्व जिला और सत्र न्यायाधीश को नियुक्त किया - सुप्रीम कोर्ट के समक्ष, याचिकाकर्ता ने प्रस्तुत किया कि उच्च न्यायालय ने करार के खंड 13 में उल्लिखित मध्यस्थ के अलावा मध्यस्थ की नियुक्ति में गलती की - कहा: सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप धारा (5) ने यह स्पष्ट किया कि यदि मध्यस्थ सातवीं अनुसूची में निर्दिष्ट श्रेणियों में से किसी एक में आता है, तो वह मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अयोग्य' हो जाता है - अपने विभिन्न निर्णयों में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को लागू करते हुए और अधिनियम की धारा 12 आर/डब्ल्यू की उप-धारा (5) को शामिल करने के उद्देश्य और उद्देश्य पर विचार करते हुए, याचिकाकर्ता संघ के अध्यक्ष को निश्चित रूप से मध्यस्थ के रूप में बने रहने के लिए 'अयोग्य' ठहराया जा सकता है - हालांकि सातवीं अनुसूची में 'अध्यक्ष' शब्द का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन साथ ही यह खंड 1 की श्रेणी में आएगा; खंड 2; खंड 5; खंड 12 और इसलिए 'अपात्र' हो जाएगा - एक बार जब एकल मध्यस्थ-अध्यक्ष मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अयोग्य' हो जाता है, तो वह एकल मध्यस्थ के रूप में बने रहने का जनादेश खो देता है - इसलिए, उच्च न्यायालय ने एकल मध्यस्थ के अलावा मध्यस्थ की नियुक्ति में कोई त्रुटि नहीं की है।

विशेष अनुमति याचिकाओं को खारिज करते हुए अदालत

निर्णीत: 1. भारत ब्रॉडबैंड नेटवर्क लिमिटेड के मामले में, यह देखा गया है कि सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप-धारा (5) ने यह स्पष्ट किया है कि यदि मध्यस्थ सातवीं अनुसूची में निर्दिष्ट श्रेणियों में से किसी एक में आता है, तो वह मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अयोग्य' हो जाता है। आगे यह देखा गया है कि एक बार जब वह 'अयोग्य' हो जाता है, तो यह स्पष्ट है कि वह तब अपने कार्यों को करने में असमर्थ हो जाता है जितना कि विधि में, उसे 'अयोग्य' माना जाता है। उक्त निर्णय में आगे यह देखा गया है कि जहां कोई व्यक्ति मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य हो जाता है, ऐसे मामले में ऐसे मध्यस्थ के समक्ष ऐसे मध्यस्थ को चुनौती देने का कोई सवाल ही नहीं है यानी एक मामला जो अधिनियम की धारा 14 (1) (ए) के तहत आता है, उतना ही आकर्षित होता है जितना कि मध्यस्थ बन जाता है। विधि के मामले के रूप में (यानी, न्यायिक रूप से), धारा 12 (5) के तहत अपने कार्यों को करने में असमर्थ, मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य होने के कारण और ऐसा होने पर, उसका जनादेश स्वचालित रूप से समाप्त हो जाता है, और फिर उसे किसी अन्य मध्यस्थ द्वारा प्रतिस्थापित किया जाएगा। [पैरा 7]

2. अब जहां तक याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क है कि राजस्थान सहकारी समिति अधिनियम, 2001 की धारा 58 के मद्देनजर, पक्षकारों के बीच विवाद को केवल रजिस्ट्रार द्वारा हल किया जाना है और राजस्थान सहकारी समिति अधिनियम, 2001 के उपनियम 30 के अनुसार लागू होगा और इसलिए किसी भी अदालत के पास अधिकार क्षेत्र नहीं होगा और इसलिए पूर्व जिला न्यायाधीश को संदर्भित विवाद का कोई आधार नहीं है। इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता कि मध्यस्थता अधिनियम एक विशेष अधिनियम है। यहां तक कि धारा 12 की उप-धारा (5) में भी गैर-बाध्यकारी खंड है। वितरण करार दिनांक 31.03.2015 में मध्यस्थता के जरिए विवाद सुलझाने का प्रावधान है। राजस्थान सहकारी समिति अधिनियम, 2001 की धारा 58 के बावजूद, मध्यस्थ के माध्यम से विवाद को हल करने के लिए पक्षकारों के बीच एक समझौता है - अध्यक्ष। पक्षकार दिनांक 31.03.2015 के करार में निहित करार और मध्यस्थता खंड से बंधे हैं। इसलिए, न तो राजस्थान सहकारी समिति अधिनियम, 2001 की धारा 58 बिल्कुल भी लागू नहीं होगी और न ही यह मध्यस्थता अधिनियम के तहत मध्यस्थ की नियुक्ति के रास्ते में आएगी।

3. अब अगला प्रश्न जिस पर विचार करने की आवश्यकता है, वह यह है कि क्या अध्यक्ष जो याचिकाकर्ता सहकारी संघ का निर्वाचित सदस्य है, को अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के तहत 'अयोग्य' कहा जा सकता है या नहीं। याचिकाकर्ता की ओर से यह मामला है कि अधिनियम की सातवीं अनुसूची में 'अध्यक्ष' का उल्लेख नहीं किया गया है और केवल प्रबंधक, निदेशक या प्रबंधन के हिस्से को अयोग्य कहा जा सकता है। पूर्वोक्त में कोई सार नहीं है। अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के तहत अयोग्यता/अपात्र को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए और उस उद्देश्य और उद्देश्य पर विचार करना चाहिए जिसके लिए अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ धारा 12 की उप-धारा (5) को शामिल किया गया था। धारा 12 की उप-धारा (5) को सातवीं अनुसूची के

साथ पढ़ा जाता है, जिसे मध्यस्थों की 'निष्पक्षता और स्वतंत्रता' को ध्यान में रखते हुए डाला गया है। इसे 'मध्यस्थों की तटस्थता' के उद्देश्य से डाला गया है। मध्यस्थों की स्वतंत्रता और निष्पक्षता किसी भी मध्यस्थता कार्यवाही की पहचान है जैसा कि वोस्टालपाइन शिनेन के मामले में देखा गया है। पूर्वाग्रह के खिलाफ नियम प्राकृतिक न्याय के मौलिक सिद्धांतों में से एक है जो सभी न्यायिक कार्यवाही और अर्ध-न्यायिक कार्यवाही पर लागू होता है और यही कारण है कि संविदात्मक रूप से सहमति के बावजूद, अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) में उल्लिखित व्यक्ति खुद को मध्यस्थता करने के लिए अयोग्य घोषित करेंगे। [पैरा 8]

4. उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को लागू करना और अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) को सम्मिलित करने के उद्देश्य और उद्देश्य पर विचार करते हुए, याचिकाकर्ता संघ के अध्यक्ष को निश्चित रूप से मध्यस्थ के रूप में बने रहने के लिए 'अयोग्य' ठहराया जा सकता है। यद्यपि सातवीं अनुसूची में 'अध्यक्ष' शब्द का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन साथ ही यह खंड 1 की श्रेणी में आता है; खंड 2; खंड 5; खंड 12। इस मामले के दृष्टिकोण में, संघ के निर्वाचित सदस्य/निदेशक को निश्चित रूप से अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के अनुसार मध्यस्थ बनने के लिए 'अयोग्य' कहा जा सकता है। [पैरा 9 और 9.1]

5. एक बार जब एकल मध्यस्थ - अध्यक्ष अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के मद्देनजर पक्षकारों के बीच विवाद को हल करने के लिए मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अयोग्य' है, तो वह एकल मध्यस्थ के रूप में बने रहने का जनादेश खो देता है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय ने एकल मध्यस्थ के अलावा मध्यस्थ नियुक्त करने में कोई त्रुटि की है - अधिनियम की धारा 11 के साथ धारा 14 के साथ शक्तियों का प्रयोग करते हुए करार के खंड 13 के अनुसार सभापति।

> भारत ब्रॉडबैंड नेटवर्क लिमिटेड बनाम यूनाइटेड टेलीकॉम लिमिटेड, (2019) 5 एससीसी 755: [2019] 6 एससीआर 97; दिल्ली मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, (2017) 4 एससीसी 665: [2017] 1 एससीआर 798 - पर भरोसा किया गया।
>
> एस.बी.पी. एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और एन.आर., (2005) 8 एससीसी: [2005] 4 सपल एससीआर 688; टीआरएफ लिमिटेड बनाम एनर्गो इंजीनियरिंग प्रोजेक्ट्स लिमिटेड, (2017) 8 एससीसी 377: [2017] 7 एससीआर 409 - संदर्भित।

संदर्भित मामले:

केस लॉ रेफरेंस [2005] 4 सपल एससीआर 688 पैरा 4.4 [2017] 7 एससीआर 409 को संदर्भित पैरा 6.3 [2019] 6 एससीआर 97 पैरा 6.3 [2017] पर निर्भर करता है 1 एससीआर 798 पैरा 6.3 पर निर्भर करता है।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 13520/2021

राजस्थान उच्च न्यायालय के जयपुर पीठ के द्वारा एसबी मध्यस्थता आवेदन संख्या 07, 08, 09, 11 और 12 2020 में

सहित विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 13543, 13663, 13632 और 13870/ 2021 में पारित निर्णय और आदेश से उद्भूत।

अपीलकर्ताओं की ओर से गुंजन पाठक, अर्चना पाठक दवे, इशिता रावत, वान्या गुप्ता, प्रमोद कुमार विश्नोई, अधिवक्ता।

न्यायालय का निम्नलिखित निर्णय दिया गया था:

1. राजस्थान उच्च न्यायालय स्थान जयपुर द्वारा मध्यस्थता और सुलह अधिनियम, 1996 (इसके बाद 'अधिनियम' के रूप में संदर्भित) की धारा 11 के तहत आवेदनों को अनुमति देने और एक मध्यस्थ की नियुक्ति करने की अनुमति देने वाले पारित आदेशों से व्यथित और असंतुष्ट होकर जयपुर जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ लिमिटेड, जयपुर (बाद में सहकारी संघ के रूप में जाना जाएगा) और अन्य ने वर्तमान विशेष अनुमति याचिकाएं दायर की हैं।

2. सुविधा के लिए, 2021 के एसएलपी (सी) नंबर 13520 में तथ्यों को बताया गया है और 2021 के एसएलपी (सी) नंबर 13520 को मुख्य मामला माना जाएगा।

3. 31.03.2015 को, उत्तरवादी और सहकारी संघ ने जयपुर में कुछ क्षेत्रों में दूध और छाछ के वितरण के लिए वितरक समझौता किया, जो दो साल की अवधि के लिए था। पक्षों के बीच विवाद हो गया। डिस्ट्रीब्यूटरशिप करार का खंड 13 विवादों के समाधान के लिए प्रदान किया गया है। खंड 13 में एक मध्यस्थता खंड शामिल है और यह प्रदान करता है कि करार से संबंधित या किसी भी तरह से उत्पन्न होने वाले सभी विवादों और मतभेदों को एकल मध्यस्थ, अध्यक्ष, जयपुर जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ लिमिटेड और उनके निर्णय के लिए भेजा जाएगा और जो पक्षकारों के लिए अंतिम और बाध्यकारी होगा। 18.08.2018 को, उत्तरवादी ने अपनी शिकायत/विवाद को इंगित करते हुए अभ्यावेदन दिया। पत्र दिनांक 22.08.2018 के माध्यम से, यहां उत्तरवादी - मूल आवेदक को एकल मध्यस्थ/अध्यक्ष के समक्ष विवाद उठाने की सलाह दी गई थी। 19.10.2019 को, उत्तरवादी फर्म/मूल आवेदक ने पक्षकारों के बीच एक वाणिज्यिक विवाद के निपटारे के लिए दिनांक 31.03.2015 के करार के खंड 13 के अनुसार एकल मध्यस्थ यानी अध्यक्ष, जयपुर जिला दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ लिमिटेड से संपर्क किया। अध्यक्ष - एकल मध्यस्थ के समक्ष मध्यस्थता की कार्यवाही के लंबित होने के दौरान, यहां उत्तरवादी - फर्म ने

अधिनियम की धारा 11 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए और करार के खंड 13 में निहित मध्यस्थता को लागू करने के लिए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाया। दिनांक 31.03.2015. याचिकाकर्ताओं द्वारा उक्त आवेदन का विरोध किया गया। यह प्रस्तुत किया गया था कि एक बार जब उत्तरवादी - फर्म ने 31.03.2015 के करार के खंड 13 को लागू करने वाले पक्षों के बीच विवाद को हल करने के लिए अध्यक्ष - एकल मध्यस्थ से संपर्क किया और उसके बाद मध्यस्थता कार्यवाही में भाग लिया, तो उसके लिए उच्च से संपर्क करना खुला नहीं है। अधिनियम की धारा 11 के तहत न्यायालय एक मध्यस्थ नियुक्त करेगा। याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क भी प्रस्तुत किया गया कि दिनांक 31.03.2015 का अधिनियम की धारा 12 के संशोधन/धारा 12 (5) को शामिल करने से पहले था और उप-धारा को शामिल करने से पहले पक्षकारों के बीच अनुबंध में प्रवेश किया गया था। (5) अधिनियम, 2015 में संशोधन द्वारा अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पठित धारा 12 की, अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पठित धारा 12 की उप-धारा (5) लागू नहीं होगी और अध्यक्ष एकल मध्यस्थ बना रहेगा। खंड 13 के अनुसार। उसके बाद आक्षेपित आदेश द्वारा और अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उपधारा (5) पर विचार करते हुए, उच्च न्यायालय ने उक्त आवेदन की अनुमति दी है और पूर्व जिला और सत्र न्यायाधीश को कार्य करने के लिए नियुक्त किया है। एक मध्यस्थ- मध्यस्थता अधिनियम की धारा 11 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए एक नए मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश से व्यथित और असंतुष्ट महसूस करते हुए, सहकारी संघ ने वर्तमान याचिकाओं को दायर किया है।

4. याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री गुंजन पाठक ने पुरजोर ढंग से यह तर्क प्रस्तुत किया है कि उच्च न्यायालय ने दिनांक 31.03.2015 के करार के खंड 13 में उल्लिखित मध्यस्थ के अलावा किसी अन्य मध्यस्थ को नियुक्त करने में गलती की है।

4.1 यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि सबसे पहले अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप-धारा (5) मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होगी, खासकर तब जब पक्षकारों के बीच समझौता उप-धारा को शामिल करने से पहले हुआ हो। अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पठित धारा 12 की धारा (5)। आगे यह प्रस्तुत किया गया है कि अन्यथा भी 'अध्यक्ष' एक निर्वाचित सदस्य होने के नाते अधिनियम की सातवीं अनुसूची के अंतर्गत नहीं आएगा। यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि 'अध्यक्ष' अधिनियम की सातवीं अनुसूची में नियुक्त किए जाने वाले अयोग्य/अयोग्य व्यक्ति में शामिल नहीं है।

4.2 यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि उच्च न्यायालय ने 2015 के अधिनियम की सातवीं अनुसूची पर भरोसा करने में गलती की है क्योंकि विद्वान एकल मध्यस्थ/अध्यक्ष जो एक निर्वाचित सदस्य है और एक निदेशक के रूप में चुनाव के आधार पर प्रबंधन का हिस्सा है या समान प्रभाव नहीं है, संशोधन अधिनियम, 2015 की सातवीं अनुसूची के खंड (5) के अनुसार अयोग्य कहा जा सकता है।

4.3 यह तर्क प्रस्तुत किया गया है कि अन्यथा राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 की धारा 58 पर विचार करते हुए भी, पक्षकारों के बीच विवाद को रजिस्ट्रार द्वारा हल किया जाना आवश्यक था और रजिस्ट्रार का निर्णय अंतिम होगा। यह प्रस्तुत किया गया है कि राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 की धारा 58 में निहित गैर-अस्थिर खंड संशोधन अधिनियम, 2015 की धारा 12 की उपधारा (5) का स्थान लेता है और इसलिए किसी भी अदालत के पास किसी भी मुकदमे पर विचार करने का अधिकार क्षेत्र नहीं होगा। या ऐसे विवाद के संबंध में कार्यवाही। यह प्रस्तुत किया गया है कि सहकारी संघ के उपनियमों के खंड 30 के अनुसार सोसायटी के सभी विवादों को राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 के अनुसार निपटाया जाएगा। यह प्रस्तुत तर्क किया गया है कि इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश को निरस्त रद्द किया जाए।

4.4 यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि जैसा कि एसबीपी एंड कंपनी बनाम पटेल इंजीनियरिंग लिमिटेड और अन्य, (2005) 8 एससीसी 618 में इस न्यायालय द्वारा आयोजित किया गया था , एक बार मामला मध्यस्थता न्यायाधिकरण में पहुंच जाता है। या एकल मध्यस्थ, उच्च न्यायालय मध्यस्थ कार्यवाही के दौरान मध्यस्थ या मध्यस्थ न्यायाधिकरण द्वारा पारित आदेशों में हस्तक्षेप नहीं करेगा और मध्यस्थ न्यायाधिकरण के किसी भी आदेश से पीड़ित पक्ष, जब तक कि धारा 37 के तहत अपील का अधिकार न हो। अधिनियम के तहत, न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय पारित होने तक प्रतीक्षा करनी होगी। यह प्रस्तुत किया गया है कि एक बार जब मध्यस्थ न्यायाधिकरण ने कार्यवाही शुरू कर दी है, तो उच्च न्यायालय को ऐसे मामलों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यह प्रस्तुत किया गया है कि इसलिए, मध्यस्थ नियुक्त करने के लिए उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश भी टिकाऊ नहीं है।

5. हमने याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को विस्तार से सुना है।

6. यह विवाद में नहीं है कि पक्षकारों के बीच डिस्ट्रीब्यूटरशिप समझौता दिनांक 31.03.2015 को किया गया था, यानी 23.10.2015 से अधिनियम की धारा 12 की उप-धारा (5) और सातवीं अनुसूची को शामिल करने से पहले। इस बात पर भी विवाद नहीं किया जा सकता है कि दिनांक 31.03.2015 के करार के खंड 13 में मध्यस्थता खंड शामिल है और खंड 13 के अनुसार, वितरण करार से संबंधित या किसी भी तरह से उत्पन्न होने वाले किसी भी विवाद और मतभेद को मध्यस्थता के माध्यम से हल किया जाएगा। खंड 13 के अनुसार ऐसा विवाद एकल मध्यस्थ - अध्यक्ष, सहकारी संघ को भेजा जाएगा।

6.1 आक्षेपित आदेश द्वारा उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 11 के तहत आवेदन की अनुमति दी है और अध्यक्ष के अलावा अन्य मध्यस्थ को नियुक्त किया है।

6.2 याचिकाकर्ताओं की दलीलों को उपरोक्तनुसार सुना गया है।

6.3 जहां तक याचिकाकर्ताओं की ओर से यह तर्क है कि अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) को शामिल करने से पहले था और इसलिए धारा 12 की उप-धारा (5) के तहत अयोग्यता है। अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ा जाना लागू नहीं होगा और एक बार मध्यस्थ - अध्यक्ष ने मध्यस्थता की कार्यवाही शुरू कर दी, उसके बाद उच्च न्यायालय के लिए मध्यस्थ नियुक्त करना उचित नहीं है, चिंतित हैं कि उपरोक्त में कोई सार नहीं है और निर्णय के मद्देनजर इसे स्वीकार किया जा सकता है। ट्रफ लिमिटेड बनाम एनर्जो इंजीनियरिंग प्रोजेक्ट्स लिमिटेड में इस न्यायालय का, (2017) 8 एससीसी 377 ; भारत ब्रॉडबैंड नेटवर्क लिमिटेड बनाम यूनाइटेड टेलीकॉम लिमिटेड, (2019) 5 एससीसी 755 ; वोएस्टालपाइन शिएनन जीएमबीएच बनाम दिल्ली मेट्रो रेल कॉर्पोरेशन लिमिटेड, (2017) 4 एससीसी 665 । उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय को अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) को सम्मिलित करने के उद्देश्य और उद्देश्य पर विस्तार से विचार करने का अवसर मिला। वोएस्टालपाइन शिएनन जीएमबीएच (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय द्वारा यह देखा और माना गया कि प्रावधान में संशोधन करने का मुख्य उद्देश्य 'मध्यस्थों की तटस्थता' प्रदान करना था। आगे यह देखा गया है कि इसे प्राप्त करने के लिए, धारा 12 की उप-धारा (5) यह निर्धारित करती है कि इसके विपरीत किसी भी पूर्व करार के बावजूद, कोई भी व्यक्ति जिसका पक्षकारों या अधिवक्ता या विवाद की विषय-वस्तु के साथ संबंध आता है। सातवीं अनुसूची में निर्दिष्ट किसी भी श्रेणी में, वह मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य होगा। आगे यह देखा गया है कि ऐसी स्थिति में, यानी जब मध्यस्थता खंड संशोधित प्रावधानों (सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप-धारा (5)) के साथ गलत पाया जाता है, तो मध्यस्थ की नियुक्ति मध्यस्थता करार से परे होगी, सशक्त बनाना न्यायालय ऐसे मध्यस्थ की नियुक्ति करेगा जिसकी अनुमति हो। आगे यह देखा गया है कि, यह धारा 12 की उप-धारा (5) में निहित गैर-अस्थिर खंड का प्रभाव होगा और दूसरा पक्ष मध्यस्थता करार के संदर्भ में मध्यस्थ की नियुक्ति पर जोर नहीं दे सकता है।

6.4 उपरोक्त निर्णय में इस न्यायालय द्वारा आगे यह देखा और माना गया है कि मध्यस्थ की स्वतंत्रता और निष्पक्षता किसी भी मध्यस्थता कार्यवाही की पहचान है। पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम प्राकृतिक न्याय के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है जो सभी न्यायिक और अर्ध-न्यायिक कार्यवाहियों पर लागू होता है। आगे यह देखा गया है कि यही कारण है कि इस तथ्य के बावजूद कि पार्टियों, मध्यस्थता और मध्यस्थों के बीच संबंध प्रकृति में संविदात्मक हैं और मध्यस्थ की नियुक्ति का स्रोत पक्षकारों के बीच किए गए करार से निकाला जाता है, इसके बावजूद ऐसे मध्यस्थ की वही गैर-स्वतंत्रता और गैर-निष्पक्षता उसे मध्यस्थता का संचालन करने के लिए अयोग्य बना देगी। आगे यह देखा गया है कि इस तर्क के पीछे उत्पत्ति यह है कि जब एक मध्यस्थ को अनुबंध के संदर्भ में और अनुबंध के पक्षों द्वारा नियुक्त किया जाता है, तब भी वह पक्षकारों से स्वतंत्र होता है। अनुच्छेद 16 से 18 तक इसे निम्नानुसार देखा और रखा गया है:

"16. अन्य संशोधनों के अलावा, धारा 12 में भी संशोधन किया गया था और संशोधित प्रावधान पहले ही ऊपर पुन: प्रस्तुत किया जा चुका है। यह संशोधन भी विधि आयोग की सिफारिश पर आधारित है जो विशेष रूप से 'मध्यस्थों की तटस्थता' के मुद्दे से निपटता है और इस संबंध में एक चर्चा पैरा 53 से 60 में निहित है और हम पूरी चर्चा को यहां नीचे पुन: प्रस्तुत करना चाहेंगे:

"**मध्यस्थों की तटस्थता**

53. यह सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत है कि मध्यस्थता प्रक्रिया सहित कोई भी अर्ध-न्यायिक प्रक्रिया, प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के अनुसार होनी चाहिए। मध्यस्थता के संदर्भ में, मध्यस्थों की तटस्थता, अर्थात। उनकी स्वतंत्रता और निष्पक्षता, पूरी प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है।

54. अधिनियम में, तटस्थता के लिए परीक्षण धारा 12(3) में निर्धारित किया गया है जो प्रदान करता है -

'12. (3) "किसी मध्यस्थ को केवल तभी चुनौती दी जा सकती है जब -

(ए) ऐसी परिस्थितियाँ मौजूद हैं जो उसकी स्वतंत्रता या निष्पक्षता के बारे में उचित संदेह पैदा करती हैं..."

55. अधिनियम उन "परिस्थितियों" की पहचान करने के लिए कोई अन्य शर्त नहीं रखता है जो "उचित संदेह" को जन्म देती हैं, और यह स्पष्ट है कि ऐसी कई परिस्थितियाँ और स्थितियाँ हो सकती हैं। परीक्षण यह नहीं है कि, परिस्थितियों को देखते हुए, क्या कोई वास्तविक पूर्वाग्रह है जो बार को बहुत ऊंचा कर रहा है; लेकिन, क्या विचाराधीन परिस्थितियाँ पूर्वाग्रह की किसी उचित आशंका को जन्म देती हैं।

56. संभावित मध्यस्थ के रूप में विशेष व्यक्तियों/पदनामों (उस इकाई से जुड़े) को नामित करने वाली राज्य संस्थाओं के साथ अनुबंध के संदर्भ में इस प्रावधान की सीमाओं का परीक्षण भारतीय सर्वोच्च न्यायालय में किया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसे सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की एक श्रृंखला द्वारा तय किया गया है (कार्यकारी अभियंता, सिंचाई प्रभाग, पुरी बनाम गंगाराम छापोलिया, 1984 (3) एससीसी 627 देखें ; सरकारी परिवहन विभाग के सचिव, मद्रास बनाम मुनुसामी मुदलियार, 1988 (सप्लीमेंट)) एससीसी 651; भारतीय अंतर्राष्ट्रीय प्राधिकरण बनाम केडी बाली और अन्य, 1988 (2) एससीसी 360 ; एस. राजन बनाम केरल राज्य, 1992 (3) एससीसी 608 ; मेसर्स इंडियन ड्रग्स एंड फार्मास्यूटिकल्स बनाम एम/ एस. इंडो-स्विस सिंथेटिक्स जर्म मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड, 1996 (1) एससीसी 54 ; यूनियन ऑफ इंडिया बनाम एमपी गुप्ता, (2004) 10 एससीसी 504 ; ऐस पाइपलाइन कॉन्ट्रैक्ट प्राइवेट लिमिटेड बनाम भारत पेट्रोलियम कॉर्पोरेशन

लिमिटेड, 2007 (5) एससीसी 304) कि सरकारी अनुबंधों में मध्यस्थता करार जो विभाग के एक सेवारत कर्मचारी द्वारा मध्यस्थता का प्रावधान करते हैं, वैध और लागू करने योग्य हैं। जबकि सुप्रीम कोर्ट ने इंडियन ऑयल कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम राजा ट्रांसपोर्ट (पी) लिमिटेड, 2009 8 एससीसी 520 में उन स्थितियों में एक मामूली अपवाद बनाया था जब मध्यस्थ "विषय अनुबंध के संबंध में नियंत्रण या व्यवहार प्राधिकारी था या यदि वह उस अधिकारी का प्रत्यक्ष अधीनस्थ है (किसी अन्य विभाग में निम्न रैंक के अधिकारी से विपरीत) जिसका निर्णय विवाद का विषय है" (एससीसी पृष्ठ 533, पैरा 34) और इस अपवाद का उपयोग किया गया था डेनियल (मालिकाना) लिमिटेड बनाम सरकार में सुप्रीम कोर्ट। भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, AIR 2012 SC 817 और Bipromasz Bipron ट्रेडिंग SA बनाम भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड, (2012) 6 SCC 384 , धारा 11 के तहत एक स्वतंत्र मध्यस्थ नियुक्त करने के लिए, यह पर्याप्त नहीं है।

57. इन अनुबंधों की प्रक्रियात्मक निष्पक्षता और बाध्यकारी प्रकृति के बीच संतुलन, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उत्तरार्द्ध के पक्ष में झुका हुआ प्रतीत होता है, और आयोग का मानना है कि विधि की वर्तमान स्थिति 18 संतोषजनक से बहुत दूर है। चूंकि निष्पक्षता और स्वतंत्रता के सिद्धांतों को कार्यवाही के किसी भी चरण में खारिज नहीं किया जा सकता है, विशेष रूप से मध्यस्थ न्यायाधिकरण के गठन के चरण में, यह कहना असंगत होगा कि पक्षकार की स्वायत्तता का प्रयोग इन सिद्धांतों की पूर्ण उपेक्षा में किया जा सकता है - भले ही पक्षकारों के बीच विवाद उत्पन्न होने से पहले ही इस पर सहमति हो चुकी है। स्वतंत्रता और निष्पक्षता के कुछ न्यूनतम स्तर हैं जो पक्षकारों के स्पष्ट करार की परवाह किए बिना मध्यस्थता प्रक्रिया के लिए आवश्यक होने चाहिए। उदाहरण के लिए, कोई भी समझदार विधि ऐसे मध्यस्थ की नियुक्ति की अनुमति नहीं दे सकता, जो स्वयं विवाद में एक पक्ष है, या जो एक पक्ष द्वारा नियोजित (या इसी तरह उस पर निर्भर) है, भले ही दोनों पक्ष इस पर सहमत हों। आयोग ने यह भी कहा कि विधि आयोग के पदेन सदस्य श्री पीके मल्होत्रा ने राज्य के लिए एक अपवाद रखने और राज्य पक्षकारों को कर्मचारी मध्यस्थ नियुक्त करने की अनुमति देने का सुझाव दिया। आयोग की राय है कि इस मुद्दे पर राज्य और गैर-राज्य दलों के बीच कोई अंतर नहीं किया जा सकता है। पक्षकार की स्वायत्तता की अवधारणा को उस बिंदु तक नहीं बढ़ाया जा सकता है जहां यह विवादों के समाधान के लिए निष्पक्ष और स्वतंत्र निर्णायकों के आधार को ही नकार दे। वास्तव में, जब निर्णायक नियुक्त करने वाला पक्ष राज्य है, तो एक निष्पक्ष और स्वतंत्र न्यायनिर्णायक नियुक्त करने का कर्तव्य और भी अधिक कठिन है - और प्राकृतिक न्याय के अधिकार को केवल "पूर्व" के अनुबंध पक्षकारों के बीच करार के समय के पूर्व उत्पन्न विवाद के आधार पर छोडा नहीं जा सकता है।

58. मध्यस्थों की तटस्थता के इस बुनियादी मुद्दे को संबोधित करने के लिए बड़े पैमाने पर संशोधन का सुझाव दिया गया है, जिसे आयोग भारत में मध्यस्थता प्रक्रिया के

कामकाज के लिए महत्वपूर्ण मानता है। विशेष रूप से, अधिनियम की धारा 11, 12 और 14 में संशोधन प्रस्तावित किया गया है।

59. आयोग ने किसी भी प्रकार के संबंध या हित के अस्तित्व के संबंध में, जिससे उचित संदेह पैदा होने की संभावना हो, मध्यस्थ द्वारा उसकी *संभावित* नियुक्ति के चरण में विशिष्ट खुलासे करने की आवश्यकता का प्रस्ताव दिया है। आयोग ने चौथी अनुसूची को शामिल करने का प्रस्ताव दिया है, जिसे अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता में हितों के टकराव पर आईबीए दिशानिर्देशों की लाल और नारंगी सूची से लिया गया है, और जिसे यह निर्धारित करने के लिए एक "मार्गदर्शक" के रूप में माना जाएगा कि क्या ऐसी परिस्थितियां मौजूद हैं जो इसे जन्म देती हैं। ऐसे उचित संदेहों के लिए. दूसरी ओर, अधिनियम की प्रस्तावित धारा 12 (5) और पांचवीं अनुसूची के संदर्भ में, जिसमें आईबीए दिशानिर्देशों (ऊपर के अनुसार) की लाल सूची से श्रेणियां शामिल हैं, मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए प्रस्तावित व्यक्ति होगा इसके विपरीत किसी पूर्व करार के बावजूद, इस प्रकार नियुक्त होने के लिए *अपात्र*। यदि ऐसे अयोग्य व्यक्ति को मध्यस्थ के रूप में नियुक्त किया जाना कथित है, तो उसे धारा 14 के प्रस्तावित स्पष्टीकरण के संदर्भ में, कानूनी रूप से अपने कार्यों को करने में असमर्थ माना जाएगा। इसलिए, जबकि *प्रकटीकरण* आवश्यक है श्रेणियों की व्यापक सूची के संबंध में (जैसा कि चौथी अनुसूची में निर्धारित है, और आईबीए दिशानिर्देशों की लाल और नारंगी सूचियों के आधार पर), मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए *अपात्रता* (और इसके परिणामस्वरूप कानूनी रूप से असमर्थता) अधिनियम) स्थितियों के एक छोटे और अधिक गंभीर उप-समूह से अनुसरण करता है (जैसा कि पांचवीं अनुसूची में निर्धारित है, और आईबीए दिशानिर्देशों की लाल सूची के आधार पर)।

60. हालाँकि, आयोग का मानना है कि *वास्तविक* और *असली* पक्षकार की स्वायत्तता का सम्मान किया जाना चाहिए, और, कुछ स्थितियों में, पक्षकारों को प्रस्तावित पाँचवीं अनुसूची में निर्धारित अपात्रता की श्रेणियों को भी माफ करने की अनुमति दी जानी चाहिए। यह पारिवारिक मध्यस्थता या अन्य मध्यस्थता की स्थितियों में हो सकता है जहां एक व्यक्ति अपनी स्वतंत्रता और निष्पक्षता के संबंध में वस्तुनिष्ठ "उचित संदेह" के अस्तित्व के बावजूद, विवाद के पक्षों के अंध विश्वास और विश्वास का आदेश देता है। ऐसी स्थितियों से निपटने के लिए, आयोग ने धारा 12 (5) के प्रावधान का प्रस्ताव दिया है, जहां पार्टियां, उनके बीच उत्पन्न होने वाले विवादों के बाद, लिखित रूप में एक स्पष्ट करार द्वारा प्रस्तावित धारा 12 (5) की प्रयोज्यता को माफ कर सकती हैं। अन्य सभी मामलों में, प्रस्तावित धारा 12(5) में सामान्य नियम का पालन किया जाना चाहिए। यदि किसी मध्यस्थ की नियुक्ति के संबंध में उच्च न्यायालय से संपर्क किया जाता है, तो आयोग ने धारा 12 (1) के संदर्भ में प्रकटीकरण की मांग करने का प्रस्ताव दिया है और किस संदर्भ में उच्च न्यायालय या नामित व्यक्ति को "उचित सम्मान" देना है। मध्यस्थ की नियुक्ति में इस तरह के प्रकटीकरण की सामग्री।" (जोर दिया गया)

17. हम यहां स्पष्टीकरण का एक नोट डाल सकते हैं। हालाँकि, विधि आयोग ने "मध्यस्थों की तटस्थता" शीर्षक के तहत उपरोक्त पहलू पर चर्चा की, चर्चा का ध्यान मध्यस्थों की निष्पक्षता और स्वतंत्रता पर था, जिसका किसी एक पक्ष से संबंध या पूर्वाग्रह है। अंतर्राष्ट्रीय मध्यस्थता के क्षेत्र में, तटस्थता आम तौर पर मध्यस्थ की राष्ट्रीयता से संबंधित होती है। अंतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में, "तटस्थता की उपस्थिति" को समान रूप से महत्वपूर्ण माना जाता है, जिसका अर्थ है कि एक मध्यस्थ तटस्थ है यदि उसकी राष्ट्रीयता पक्षकारों से अलग है। हालाँकि, यह वह पहलू नहीं है जिस पर विचार किया जा रहा है और इस्तेमाल किया गया शब्द "तटस्थता" किसी भी पक्ष के प्रति पूर्वाग्रह के बिना, मध्यस्थों की निष्पक्षता और स्वतंत्रता से संबंधित है। वास्तव में, "मध्यस्थों की तटस्थता" शब्द का प्रयोग आमतौर पर इस संदर्भ में भी किया जाता है।

18. विधि आयोग की उपरोक्त अनुशंसा को ध्यान में रखते हुए, जिस भावना के साथ, धारा 12 को संशोधन अधिनियम, 2015 द्वारा संशोधित किया गया है, यह स्पष्ट है कि प्रावधान में संशोधन करने का मुख्य उद्देश्य मध्यस्थों की तटस्थता प्रदान करना था। इसे प्राप्त करने के लिए, धारा 12 की उप-धारा (5) यह बताती है कि इसके विपरीत किसी भी पूर्व करार के बावजूद, कोई भी व्यक्ति जिसका पक्षकारों या अधिवक्ता या विवाद के विषय के साथ संबंध निर्दिष्ट श्रेणियों में से किसी एक के अंतर्गत आता है। सातवीं अनुसूची के अनुसार, वह मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य होगा। ऐसी स्थिति में, यानी जब मध्यस्थता खंड ऊपर निकाले गए संशोधित प्रावधानों के साथ गलत पाया जाता है, तो मध्यस्थ की नियुक्ति मध्यस्थता करार से परे होगी, जिससे अदालत को ऐसे मध्यस्थों को नियुक्त करने का अधिकार मिल जाएगा, जिन्हें अनुमति दी जा सकती है। यह धारा 12 की उप-धारा (5) में निहित गैर-अस्थिर खंड का प्रभाव होगा और दूसरा पक्ष मध्यस्थता करार के संदर्भ में मध्यस्थ की नियुक्ति पर जोर नहीं दे सकता है।

7. भारत ब्रॉडबैंड नेटवर्क लिमिटेड (सुप्रा) के मामले में, यह देखा गया है कि सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप-धारा (5) ने यह स्पष्ट कर दिया है कि यदि मध्यस्थ सातवीं अनुसूची में निर्दिष्ट श्रेणियों में से किसी एक में आता है , वह मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अपात्र' हो जाता है। आगे यह देखा गया है कि एक बार जब वह 'अपात्र' हो जाता है, तो यह स्पष्ट है कि वह तब अपने कार्यों को करने में असमर्थ हो जाता है, क्योंकि विधि में उसे 'अयोग्य' माना जाता है। उक्त निर्णय में यह भी देखा गया है कि जहां कोई व्यक्ति मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य हो जाता है, ऐसे मामले में ऐसे मध्यस्थ के समक्ष चुनौती का कोई सवाल ही नहीं है, यानी ऐसा मामला जो धारा 14(1)(ए) के अंतर्गत आता है। अधिनियम तब तक आकर्षित होता है जब तक मध्यस्थ विधि के मामले में (अर्थात्, कानूनी रूप से), धारा 12(5) के तहत अपने कार्यों को करने में असमर्थ हो जाता है, मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य हो जाता है और ऐसा होने पर, उसका जनादेश होता है स्वचालित रूप से समाप्त हो जाता है, और उसके स्थान पर किसी अन्य मध्यस्थ को नियुक्त किया जाएगा।

7.1 अब जहां तक याचिकाकर्ताओं की ओर से निवेदन है कि राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 की धारा 58 के मद्देनजर, पक्षकारों के बीच विवाद का निपटारा केवल रजिस्ट्रार द्वारा किया जाना है और राजस्थान सहकारी सोसायटी के उपनियम 30 के अनुसार अधिनियम, 2001 लागू होगा और इसलिए किसी भी न्यायालय का क्षेत्राधिकार नहीं होगा और इसलिए पूर्व जिला न्यायाधीश को संदर्भित विवाद अस्थिर है और इसमें कोई दम नहीं है। इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता कि मध्यस्थता अधिनियम एक विशेष अधिनियम है। यहां तक कि धारा 12 की उपधारा (5) में भी गैर-अप्रत्याशित खंड कहा गया है। डिस्ट्रीब्यूटरशिप एग्रीमेंट दिनांक 31.03.2015 में विवाद को मध्यस्थता के माध्यम से हल करने का प्रावधान है। राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 की धारा 58 के बावजूद, पक्षकारों के बीच मध्यस्थ के माध्यम से विवाद को हल करने का समझौता है - अध्यक्ष। पक्ष दिनांक 31.03.2015 के करार में निहित करार और मध्यस्थता खंड से बंधे हैं। इसलिए, न तो राजस्थान सहकारी सोसायटी अधिनियम, 2001 की धारा 58 बिल्कुल भी लागू नहीं होगी और न ही यह मध्यस्थता अधिनियम के तहत मध्यस्थ की नियुक्ति के रास्ते में आएगी।

8. अब अगला प्रश्न जिस पर विचार करना आवश्यक है वह यह है कि क्या अध्यक्ष, जो याचिकाकर्ता सहकारी संघ का निर्वाचित सदस्य है, को अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के तहत 'अपात्र' कहा जा सकता है। या नहीं। याचिकाकर्ता की ओर से कहा गया कि अधिनियम की सातवीं अनुसूची में 'अध्यक्ष' का उल्लेख नहीं है और केवल प्रबंधक, निदेशक या प्रबंधन के हिस्से को ही अयोग्य कहा जा सकता है। उपरोक्त बातों में कोई दम नहीं है। अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उप-धारा (5) के तहत अयोग्यता/अयोग्यता को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए और उस उद्देश्य और उद्देश्य पर विचार करना चाहिए जिसके लिए धारा 12 की उप-धारा (5) सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाती है। एक्ट डाला जाने लगा. सातवीं अनुसूची के साथ पठित धारा 12 की उप-धारा (5) को मध्यस्थों की 'निष्पक्षता और स्वतंत्रता' को ध्यान में रखते हुए जोड़ा गया है। इसे 'मध्यस्थों की तटस्थता' के उद्देश्य से डाला गया है। मध्यस्थों की स्वतंत्रता और निष्पक्षता किसी भी मध्यस्थता कार्यवाही की पहचान है, जैसा कि वोएस्टालपाइन शिएनन (सुप्रा) के मामले में देखा गया है। पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम प्राकृतिक न्याय के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है जो सभी न्यायिक कार्यवाहियों और अर्ध-न्यायिक कार्यवाहियों पर लागू होता है और यही कारण है कि अनुबंध पर सहमति के बावजूद, धारा 12 की उप-धारा (5) में उल्लिखित व्यक्ति पढ़ते हैं अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ वह स्वयं को मध्यस्थता करने के लिए अयोग्य बना देगा। वोएस्टालपाइन शिएनन (सुप्रा) के मामले में पैराग्राफ 20 से 22 में इसे निम्नानुसार देखा और रखा गया है:

> “20. मध्यस्थ की स्वतंत्रता और निष्पक्षता किसी भी मध्यस्थता कार्यवाही की पहचान है। पूर्वाग्रह के विरुद्ध नियम प्राकृतिक न्याय के मूलभूत सिद्धांतों में से एक है जो सभी न्यायिक और अर्ध-न्यायिक कार्यवाहियों पर लागू होता है। यही कारण है कि इस तथ्य के बावजूद कि मध्यस्थता के पक्षकारों और मध्यस्थों के बीच संबंध प्रकृति में संविदात्मक

हैं और मध्यस्थ की नियुक्ति का स्रोत पक्षकारों के बीच हुए करार से निकाला जाता है, समान गैर-स्वतंत्रता के बावजूद और ऐसे मध्यस्थ की गैर-निष्पक्षता (हालाँकि अनुबंध पर सहमति हो) उसे मध्यस्थता का संचालन करने के लिए अयोग्य बना देगी। इस तर्क के पीछे उत्पत्ति यह है कि जब एक मध्यस्थ को अनुबंध के संदर्भ में और अनुबंध के पक्षों द्वारा नियुक्त किया जाता है, तब भी वह पक्षकारों से स्वतंत्र होता है। कार्यों और कर्तव्यों के लिए उससे यह अपेक्षा की जाती है कि वह पक्षकारों के पक्षपातपूर्ण हित से ऊपर उठे और किसी भी पक्ष के विशेष हित में कार्य न करे या उसे आगे न बढ़ाए। आख़िरकार, मध्यस्थ को निर्णायक भूमिका निभानी होती है और इसलिए, उसे पक्षकारों से स्वतंत्र होने के साथ-साथ निष्पक्ष भी होना चाहिए। यूनाइटेड किंगडम सुप्रीम कोर्ट ने हशवानी बनाम जीवराज मामले में इस पहलू को निम्नलिखित शब्दों में खूबसूरती से उजागर किया है: (डब्ल्यूएलआर पृष्ठ 1889, पैरा 45)

“45 .. ...मध्यस्थ या मध्यस्थ नियुक्त करने का प्रमुख उद्देश्य करार की शर्तों के अनुसार पक्षकारों के बीच विवाद का निष्पक्ष समाधान है और, हालांकि पक्षकारों और मध्यस्थों के बीच अनुबंध एक अनुबंध होगा व्यक्तिगत सेवाओं का प्रावधान, वे पक्षकारों के निर्देशन में व्यक्तिगत सेवाएँ नहीं थे।"

21. इसी प्रकार, फ्रांस के कौर डी कैसेशन ने 1972 में कंसोर्ट्स उरी में दिए गए एक फैसले में रेखांकित किया कि:

"न्यायिक शक्ति के प्रयोग में एक स्वतंत्र दिमाग अपरिहार्य है, चाहे उस शक्ति का स्रोत कुछ भी हो, और यह एक मध्यस्थ के आवश्यक गुणों में से एक है।"

22. स्वतंत्रता और निष्पक्षता दो अलग अवधारणाएँ हैं। एक मध्यस्थ स्वतंत्र हो सकता है और फिर भी उसमें निष्पक्षता का अभाव हो सकता है, या इसके विपरीत भी हो सकता है। जैसा कि सर्वमान्य है, निष्पक्षता स्वतंत्रता की तुलना में अधिक व्यक्तिपरक अवधारणा है। स्वतंत्रता, जो एक अधिक वस्तुनिष्ठ अवधारणा है, इस प्रकार, मध्यस्थ द्वारा प्रकट की गई परिस्थितियों के आलोक में मध्यस्थता कार्यवाही की शुरुआत में पक्षकारों द्वारा अधिक स्पष्ट रूप से सुनिश्चित की जा सकती है, जबकि मध्यस्थता कार्यवाही के दौरान पक्षपात अधिक होने की संभावना है।

9. उपरोक्त निर्णयों में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि को लागू करने और अधिनियम की सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी जाने वाली धारा 12 की उपधारा (5) को सम्मिलित करने के उद्देश्य और उद्देश्य पर विचार करते हुए, याचिकाकर्ता संघ के अध्यक्ष को निश्चित रूप से नियुक्त किया जा सकता है। मध्यस्थ के रूप में बने रहने के लिए 'अपात्र' होना। हालाँकि सातवीं अनुसूची में 'अध्यक्ष' शब्द का विशेष रूप से उल्लेख नहीं किया गया है, लेकिन साथ ही यह खंड 1 की श्रेणी में आएगा; खण्ड 2; खण्ड 5; खण्ड 12 जो इस प्रकार है:

"1. मध्यस्थ एक कर्मचारी, सलाहकार, सलाहकार है या किसी पक्षकार के साथ उसका कोई अन्य अतीत या वर्तमान व्यावसायिक संबंध है।

2. मध्यस्थ वर्तमान में किसी एक पक्ष या किसी एक पक्ष के सहयोगी का प्रतिनिधित्व करता है या उसे सलाह देता है।

5. मध्यस्थ एक प्रबंधक, निदेशक या प्रबंधन का हिस्सा होता है, या किसी एक पक्ष के सहयोगी में समान नियंत्रण प्रभाव रखता है, यदि सहयोगी सीधे मध्यस्थता में विवाद के मामलों में शामिल होता है।

12. मध्यस्थ एक प्रबंधक, निदेशक या प्रबंधन का हिस्सा होता है, या किसी एक पक्ष में समान नियंत्रण प्रभाव रखता है।"

9.1 इस मामले को देखते हुए, अध्यक्ष जो संघ का निर्वाचित सदस्य/निदेशक है, को निश्चित रूप से सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उपधारा (5) के अनुसार मध्यस्थ बनने के लिए 'अपात्र' कहा जा सकता है।

10. अब जहां तक याचिकाकर्ताओं की ओर से इस तर्क का सवाल है कि उत्तरदाताओं ने एकल मध्यस्थ - अध्यक्ष के समक्ष मध्यस्थता की कार्यवाही में भाग लिया था और इसलिए उन्हें धारा 11 के तहत मध्यस्थ की नियुक्ति के लिए उच्च न्यायालय से संपर्क नहीं करना चाहिए था, तो वही बात सामने आती है। कोई सार भी नहीं है. जैसा कि इस न्यायालय ने भारत ब्रॉडबैंड नेटवर्क लिमिटेड (सुप्रा) के मामले में कहा था, धारा 12(5) प्रावधान की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए लिखित रूप में एक 'स्पष्ट समझौता' होना चाहिए। पैराग्राफ 15 और 20 में इसे निम्नानुसार देखा और रखा गया है:

"15. दूसरी ओर, धारा 12(5), एक नया प्रावधान है जो किसी मध्यस्थ की इस तरह कार्य करने में कानूनी अक्षमता से संबंधित है। इस प्रावधान के तहत, इसके विपरीत किसी भी पूर्व करार को धारा 12(5) में गैर-अस्थिर खंड द्वारा मिटा दिया जाता है, जिस क्षण कोई भी व्यक्ति जिसका पक्षकारों या अधिवक्ता या विवाद के विषय के साथ संबंध सातवीं अनुसूची के अंतर्गत आता है। उप-धारा तब घोषणा करती है कि ऐसा व्यक्ति मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए "अपात्र" होगा। एकमात्र तरीका जिससे इस अपात्रता को हटाया जा सकता है वह प्रावधान है, जो फिर से एक विशेष प्रावधान है जिसमें कहा गया है कि पार्टियां, उनके बीच उत्पन्न होने वाले विवादों के बाद, लिखित रूप में एक स्पष्ट करार द्वारा धारा 12(5) की प्रयोज्यता को माफ कर सकती हैं। . इसलिए, जो स्पष्ट है, वह यह है कि जहां, पक्षकारों के बीच किसी करार के तहत, कोई व्यक्ति सातवीं अनुसूची में निर्धारित किसी भी श्रेणी में आता है, वह विधि के मामले में, मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य है। एकमात्र तरीका जिससे इस अपात्रता को हटाया जा सकता है, फिर से,

विधि में, यह है कि पार्टियां अपने बीच विवाद उत्पन्न होने के बाद, "लिखित रूप में स्पष्ट करार" द्वारा इस उप-धारा की प्रयोज्यता को माफ कर सकती हैं। जाहिर है, "लिखित रूप में व्यक्त करार" में एक ऐसे व्यक्ति का संदर्भ है जिस पर सातवीं अनुसूची द्वारा प्रतिबंध लगाया गया है, लेकिन जिसे पक्षकारों द्वारा (उनके बीच विवाद उत्पन्न होने के बाद) एक ऐसा व्यक्ति बताया गया है जिस पर उनका विश्वास है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसे व्यक्ति पर सातवीं अनुसूची द्वारा प्रतिबंध लगाया गया है।

xxx xxx xxx

20. यह हमें इस मामले के तथ्यों पर धारा 12(5) के परंतुक की प्रयोज्यता के बारे में बताता है। अधिनियम की धारा 4 के विपरीत, जो आचरण द्वारा आपत्ति करने के अधिकार की छूट से संबंधित है, धारा 12(5) का प्रावधान केवल तभी लागू होगा जब पक्षकारों के बीच उत्पन्न होने वाले विवादों के बाद, पार्टियां उप-धारा की प्रयोज्यता को छोड़ देती हैं (5) धारा 12 के लिखित रूप में एक स्पष्ट करार द्वारा। इस कारण से, अधिनियम की धारा 7 की सादृश्यता पर आधारित तर्क को भी खारिज किया जाना चाहिए। धारा 7 मध्यस्थता समझौतों से संबंधित है जो लिखित रूप में होना चाहिए, और फिर बताती है कि ऐसे करार दस्तावेजों में शामिल हो सकते हैं जो ऐसे समझौतों का रिकॉर्ड प्रदान करते हैं। दूसरी ओर, धारा 12(5) "लिखित रूप में व्यक्त करार" को संदर्भित करती है। अभिव्यक्ति "लिखित में समझौता व्यक्त करें" शब्दों में किए गए करार को संदर्भित करता है, न कि उस करार के विपरीत जिसका अनुमान आचरण से लगाया जाता है। यहां भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 की धारा 9 महत्वपूर्ण हो जाती है। वो कहता है:

> “9. वादे, अभिव्यक्ति और प्रयोज्यता – जहां तक किसी वादे का प्रस्ताव या स्वीकृति शब्दों में की जाती है, वादा व्यक्त कहा जाता है। जहां तक इस तरह का प्रस्ताव या स्वीकृति शब्दों के अलावा अन्यथा की जाती है, वादा निहित माना जाता है। इसलिए यह आवश्यक है कि लिखित रूप में एक "व्यक्त" समझौता हो।
>
> यह समझौता एक ऐसा समझौता होना चाहिए जिसके द्वारा दोनों पक्ष, इस तथ्य की पूरी जानकारी होने के बावजूद कि श्री खान मध्यस्थ के रूप में नियुक्त होने के लिए अयोग्य हैं, फिर भी आगे बढ़ें और कहें कि उन्हें इस पद पर बने रहने के लिए उन पर पूरा विश्वास और विश्वास है। वर्तमान मामले के तथ्य ऐसे किसी स्पष्ट करार का खुलासा नहीं करते हैं। उच्च न्यायालय ने जिस नियुक्ति पत्र पर मामले के तथ्यों पर स्पष्ट सहमति का संकेत दिया है, वह दिनांक 17.01.2017 का है। इस तिथि पर, अपीलकर्ता

के प्रबंध निदेशक को निश्चित रूप से पता नहीं था कि श्री खान को उनके द्वारा नियुक्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि सातवीं अनुसूची के साथ पढ़ी गई धारा 12 (5) केवल मध्यस्थ के रूप में प्रबंध निदेशक की नियुक्ति को अमान्य कर देती है। . श्री खान की अवैध नियुक्ति टीआरएफ लिमिटेड (सुप्रा) में सुप्रीम कोर्ट द्वारा विधि की घोषणा के बाद ही स्पष्ट हो गई, जैसा कि हमने यहां ऊपर देखा है, केवल 03.07.2017 को हुई थी। इस तिथि के बाद, श्री खान की नियुक्ति की वैधता के बारे में पक्षकारों के बीच स्पष्ट सहमति होने से दूर, अपीलकर्ता ने एकल मध्यस्थ के समक्ष 07.10.2017 को एक आवेदन दायर किया, जिससे मध्यस्थ का ध्यान टीआरएफ लिमिटेड (सुप्रा) में फैसले की ओर दिलाया गया।) और उससे यह घोषित करने के लिए कहा कि वह मध्यस्थ के रूप में कार्य करने में कानूनी रूप से असमर्थ हो गया है। समान रूप से, तथ्य यह है कि दावे का एक बयान मध्यस्थ के समक्ष दायर किया गया है, इसका मतलब यह नहीं होगा कि शब्दों में एक स्पष्ट समझौता है जो यह स्पष्ट करेगा कि दोनों पक्ष चाहते हैं कि श्री खान इस तरह कार्य करने के लिए अयोग्य होने के बावजूद मध्यस्थ के रूप में बने रहें। यह मामला होने के नाते, आक्षेपित निर्णय सही नहीं है जब यह अधिनियम की धारा 4, धारा 7, धारा 12(4), धारा 13(2), और धारा 16(2) को वर्तमान मामले के तथ्यों पर लागू करता है, और आगे कहा गया है कि अपीलकर्ता को मध्यस्थ की पात्रता के मुद्दे को उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, क्योंकि उसने खुद ही मध्यस्थ नियुक्त किया है। अपील के तहत निर्णय यह कहते हुए भी सही है कि इस तथ्य से लिखित रूप में स्पष्ट छूट है कि अपीलकर्ता द्वारा एक नियुक्ति पत्र जारी किया गया है, और उत्तरवादी द्वारा मध्यस्थ के समक्ष दावे का एक बयान दायर किया गया है। जैसे ही अपीलकर्ता को पता चला कि श्री खान की नियुक्ति ही अमान्य होगी, उसने अपने अधिकार को समाप्त करने के लिए एकल मध्यस्थ के समक्ष एक आवेदन दायर किया।

11. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर बताए गए कारणों के लिए एक बार एकल मध्यस्थ - अध्यक्ष सातवें के साथ पढ़ी गई धारा 12 की उप-धारा (5) के मद्देनजर पक्षकारों के बीच विवाद को सुलझाने के लिए मध्यस्थ के रूप में कार्य करने के लिए 'अपात्र' है। अधिनियम की अनुसूची में वह एकल मध्यस्थ के रूप में बने रहने का अधिकार खो देता है। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय ने अधिनियम की धारा 14 के साथ पढ़ी गई धारा 11 के तहत शक्तियों का प्रयोग करते हुए करार के खंड 13 के अनुसार एकल मध्यस्थ - अध्यक्ष के अलावा किसी अन्य मध्यस्थ को नियुक्त करने में कोई त्रुटि की है।

12. उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर बताए गए कारणों से ये सभी आवेदन खारिज किए जाने योग्य हैं।

तदनुसार विशेष अनुमति याचिकाएं खारिज की जाती हैं।

अंकित ज्ञान

याचिकायें खारिज

हिंदी रूपातंरण

आदित्य जोशी
षष्ठम अपर जिला
एवं सत्र न्यायाधीश
दुर्ग, छ०ग०

